Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

वैष्णव धर्म और अहिंसा

डॉ0 अर्चना सिंह
एसो0 प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद डिग्री कालेज, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 2 Issue 3
Page Number : 145-148
Publication Issue :
May-June-2019
Article History
Accepted : 20 June 2019
Published : 30 June 2019

सारांश– वैष्णवधर्म में अहिंसा पर पूर्ण बल देकर उसके परिपालन का स्थान–स्थान पर उपदेश दिया गया है।

मुख्य शब्द–वैष्णवधर्म, अहिंसा, उपदेश, सम्प्रदाय, सृष्टि।

अनन्तकोटिब्रह्माण्डनायक करुणा–वरुणालय सर्वेश्वर भगवान् श्रीविष्णु की सर्वतोभावेन अनन्य उपासना करने वाले उपासक–जनों को 'वैष्णव' और उनके द्वारा परिपालित श्रीविष्णु–प्रिय विशेष नियमों को 'वैष्णवधर्म' कहते हैं।

वैष्णवधर्म एक विश्वव्यापी विशाल धर्म है। जिस प्रकार श्रीविष्णु अनन्त और अनादि है, ठीक उसी प्रकार उनका यह धर्म भी अनन्त और अनादि है। इस कारण वैष्णवधर्म ही परम धर्म है। इसी को सनातन, भागवत एवं सद्धर्म आदि नामों से व्यवहृत किया जाता है।

वैष्णवधर्म का प्रतिपालन करने वाले वैष्णव में स्वभावतः हिंसा का अभाव रहता है अर्थात् मन, वाणी और कर्मद्वारा उससे किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं बनती। इस धर्म में सात्त्विक विचारों पर विशेष बल दिया गया है। हिंसादि भावों के लिये इसमें लेशमात्र भी गुंजाइश नहीं है। इसी कारण वैष्णवधर्म सर्वलोकप्रिय होने से अपना एक विशेष महत्त्व रखता है।

'सर्वभूतहिते रताः' (गीता 5/25), 'आत्मवत्सर्वभूतेषु' तथा 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के भावों का जन्म से लेकर मरणपर्यन्त क्रियात्मक रूप में परिपालन करने के आदेश ने इसके प्रति विचारशील पुरुषों के हृदय को और भी आकृष्ट कर दिया है। हिंसाप्रेमी महापुरुषों ने इसे अपनाया और मन, वाणी तथा कर्मद्वारा संसार की भलाई के लिये इस धर्म पर आरूढ़ होने का संकेत भी किया। उन्होंने यहाँ तक बतलाया कि किसी एक व्यक्ति या समूह का ही नहीं, अपितु स्थावर से लेकर जंगमपर्यन्त सभी का यदि हित हो सकता है तो वह एक वैष्णवधर्म से।

वैष्णवधर्म किसी मजहब, सम्प्रदाय या किसी विशेष धर्म का विरोधी नहीं, बल्कि सबको सात्त्विक भावों पर निर्भर प्रेम के एक सूत्र में बाँधना चाहता है। यहाँ तक कि मूक पशुओं पर भी प्रेम करने का अभ्यास सिखाता है। नाममात्र की दिखावटी अहिंसा के ढाँचे में हमें ढालना नहीं चाहता वह चाहता है, सही अहिंसा के रंग में मन, वाणी एवं कर्म को रँगना। वैष्णवधर्म प्राणिमात्र के प्रति दया तथा सद्भावना उत्पन्न करने की शिक्षा देता है।

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

वैष्णवधर्म में वह शक्ति निहित है, जिसके अपनाने से समस्त धर्मों का समादर एवं उसके प्रवर्तक श्रीविष्णु की प्रसन्नता से समस्त देवी–देवताओं की प्रसन्नता हो जाती है–

यथा तरोर्मूलनिषेचनेन तृप्यन्ति तत्स्कन्धभुजोपशाखाः।
प्राणोपहाराच्च यथेन्द्रियाणां तथैव सर्वार्हणमच्युतेज्या।।[1]

जिस प्रकार वृक्ष के मूल (जड़) में जल देने से उसकी शाखा, उपशाखा और पत्ते आदि सभी का पोषण हो जाता है और जैसे भोजन द्वारा प्राणों को तृप्त करने से समस्त इन्द्रियाँ परिपुष्ट हो जाती हैं, ठीक उसी प्रकार भगवान् श्रीविष्णु की पूजा से सभी देवगणों की पूजा हो जाती है।

अविरोध से सब अङ्गों का पालन करने के कारण वैष्णवधर्म सर्वोच्च अभयप्रद और वेद–पुराणादि शास्त्रों द्वारा सम्मत है। इस धर्म के सुरम्य मैदान में सभी एक साथ बैठ सकते हैं। वैष्णवधर्म वर्ण, आश्रम, जाति आदि की सीमा से बद्ध नहीं है। उसका क्षेत्र तो इनसे बहुत परे निकल गया है। वर्णाश्रम के पालन का अधिकार वर्णाश्रमियों पर ही है; पर वैष्णवधर्म–पालन का अधिकार प्रत्येक जन–साधारण को है।

वैष्णव–धर्म संकुचित धर्म नहीं, उसके दृष्टिकोण के अनुसार उसका विस्तार एवं प्रचार–प्रसार पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण आसेतुपर्यन्त सर्वत्र है। वैष्णवधर्म की महान्, विशाल सहृदयता का वर्णन करते हुए भागवतकार ने लिखा है–

किरातहूणान्ध्रपुलिन्दपुल्कसा आभीरकङ्का यवनाः खसादयः।
येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः शुद्ध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवै नमः।।[2]

'वैष्णवधर्म का समाश्रय ग्रहणकर किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुल्कस, आमीर, कङ्क, यवन और खस आदि तथा अन्य और पापजातियाँ भी जिन भगवान् श्रीहरि के भक्तों का अवलम्बन (चरण–शरण) लेकर परम शुद्ध हो गयीं, उन भगवान् श्रीहरि को नमस्कार करते हैं।'

मुख्यतया वैष्णवों के तीन प्रधान कर्म हैं–

वैष्णवानां त्रयं कर्म दया जीवेषु नारद।
श्रीगोविन्दे परा भक्तिस्तदीयानां सर्मर्चनम्।।[3]

'एक तो जीवों पर दया, दूसरे श्रीगोविन्द में पराभक्ति तथा तीसरा कर्म वैष्णवजन की सेवा।' अतः वैष्णवजनों को इन तीनों कर्मों का यथेष्ट परिपालन करना चाहिये।

वैष्णवधर्म के मूल प्रवर्तक भगवान् श्रीविष्णु हैं, जो सकल सृष्टि के सर्जन–पालनहार हैं। अतएव उनका यह परमप्रिय वैष्णवधर्म भी सभी को हिंसा, छल, कपट, राग–द्वेष आदि से दूर रहने का उपदेश करते हुए चराचर के साथ एक दूसरे का हित–चिन्तन, उन्हें प्रेमसरिता में अवगाहन कराने के लिये उत्कण्ठित करता है।

भगवान् विष्णु ने ब्रह्माजी को वैष्णवजनों के लक्षणों का वर्णन करते हुए 'पद्मपुराण' में बताया है कि–

कामक्रोधविहीना ये हिंसादम्भविवर्जिताः।
लोभमोहविहीनाश्च ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः।।
अमत्सरा दयायुक्ताः सर्वभूतहितैषिणः।
सत्योक्तिभाषिणश्चैव विज्ञेयास्ते च वैष्णवाः।।[4]

'जो काम–क्रोधादि से रहित, हिंसा, दम्भ (पाखण्ड) से वर्जित और लोभ तथा मोह से रहित हैं, उन्हीं को वैष्णव जानना चाहिये। मात्सर्य (जलन) रहित, दयायुक्त, सब जीवों के हितैषी और सत्यवक्ता मनुष्य ही वैष्णव जानने–योग्य हैं।'

वैष्णव–शिरोमणि देवर्षि श्रीनारदजी ने कर्मकाण्ड में अत्यन्त आसक्त राजा प्राचीनबर्हि को वैष्णवधर्म का सदुपदेश करते समय हिंसावृत्ति की निन्दा करते हुए आकाश की ओर अँगुली का संकेत कर यह बताया कि 'देखो, जिन–जिन पशुओं की तुमने हिंसा की है, वे तुम्हारी बाट देख रहे हैं कि यह कब मरकर आये और हम इससे अपना बदला लें।' इस सम्बन्ध में श्रीनारद जी ने एक विस्तृत कथानक सुनाकर राजा को घोर पतन की ओर ले जाने वाली हिंसामयी प्रवृत्ति से रोका और परमवैष्णव बनाकर सदा के लिये बन्धनमुक्त कर दिया। यह कथानक श्रीमद्भागवत के चतुर्थ स्कन्ध में 'पुरंजनोपाख्यान' के नाम से सुप्रसिद्ध है।

सम्पूर्ण वेद–मन्त्रों को मान्यता देकर समन्वयात्मक रूप से एकता का परिचय देने वाले स्वाभाविक भेदाभेद (द्वैताद्वैत) सिद्धान्त–प्रवर्तक श्रीसुदर्शनावतार आद्याचार्य जगद्गुरु भगवान् श्रीनिम्बार्क महामुनीन्द्र ने भी बताया है–

सर्वं हि विज्ञानमतो यथार्थकं श्रुतिस्मृतिभ्यो निखिलस्य वस्तुनः।
ब्रह्मात्मकत्वादिति वेदविन्मतं त्रिरूपतापि श्रुतिसूत्रसाधिता।।[5]

'श्रुति–स्मृतियों के प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध है कि समस्त चराचर जगत् की अन्तरात्मा ब्रह्म है और त्रिरूपता (ब्रह्म–जीव–जगत्) भी श्रुति–स्मृतियों द्वारा सिद्ध है। अतः सभी विज्ञान ब्रह्मात्मक होने से यथार्थ (सत्य) हैं।'

भाव यह है कि समस्त चराचर जगत् ब्रह्म का अंश एवं परापरात्मिका प्रकृति (शक्ति) होने के कारण सत्य है, अतएव किसी भी प्राणी को दुःख पहुँचाना या उसके साथ विद्वेष करना, ईश्वर को ही दुःख पहुँचाना एवं उसके साथ विद्वेष करना है। जड़ वस्तुओं का भी दुरुपयोग करना निषिद्ध है। शास्त्र की आज्ञानुसार अचेतनतत्त्व में भी समादरणीयभाव रखना आवश्यक है। यही सच्ची अहिंसा है।

श्रीनिम्बार्क–सम्प्रदाय के आचार्यचरण श्रीरसिकराजराजेश्वर महावाणीकार अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीहरिव्यासदेवाचार्य जी महाराज ने भी 'चटथावल' नामक ग्राम के एक मुखिया जागीरदार को जो कट्टर शाक्त था और समय–समय पर पुष्कलरूप से देवी जी को पशुबलि दिया करता था, इसी वैष्णवधर्म से परम प्रभावित कर वैष्णव बनाया। उसी अवसर पर देवी ने भी स्वयं आकर श्रीमहाराज से मन्त्र–दीक्षा ग्रहण की। धन्य है यह वैष्णवधर्म, जिसके द्वारा प्रभावित होकर देवी ने भी वैष्णवीदीक्षा ग्रहण की। यह प्रसिद्ध गाथा श्रीनाभास्वामीकृत 'भक्तमाल' नामक ग्रन्थ की प्रियादास जी रचित टीका में पढ़ने योग्य है। इनके सम्बन्ध में अन्यत्र भी बताया है–

महिमा विदित कहौ कहौं, देखत नगर मँझार।
देवी को उपदेश दे, मेट्यौ पसु संहार।।[6]

यद्यपि अहिंसा धर्म का एक अङ्ग है; फिर भी इसके परिपालन से धर्म के सभी अङ्गों का सहज ही परिपालन हो जाता है। 'पातंजलयोगदर्शन' में बताया गया है–

'अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्संनिधौ वैरत्यागः।'[7]

अर्थात् अहिंसा का परिपालन करने पर उसके आस–पास का वातावरण शुद्ध होकर वहाँ रहने वाले पशु–पक्षियों में भी पारस्परिक वैरभाव छूटकर मित्रभाव बन जाता है।

इस प्रकार वैष्णवधर्म में अहिंसा पर पूर्ण बल देकर उसके परिपालन का स्थान–स्थान पर उपदेश दिया गया है।

सन्दर्भ :

1.श्रीमद्भगवद्, 4/31/14
2.श्रीमद्भगवद्, 2/4/18
3.श्रीनारदपंचरात्र
4.पद्मपुराण
5.वेदान्तदशश्लोकी, 7
6.भक्तमाल, परमहंस–वंशावली, 32
7.पातंजलयोगदर्शन, 2/35